International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(4): 70-76

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(4): 70-76
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-05-2020
Accepted: 09-06-2020

डा. हेमन्तकुमार नेपाल
सहायक प्राध्यापक, साहित्य विभाग, सरकारी संस्कृत महाविद्यालय, साम्दोङ्ग, पूर्व सिक्किम, भारत।

Corresponding Author:
डा. हेमन्तकुमार नेपाल
सहायक प्राध्यापक, साहित्य विभाग, सरकारी संस्कृत महाविद्यालय, साम्दोङ्ग, पूर्व सिक्किम, भारत।

मेघदूतम् की प्रतीकात्मक अध्ययन

डा. हेमन्तकुमार नेपाल

सार

वस्तु की प्रतिनिधित्व कर्ने वाली सजीव वा निर्जीव वस्तुको प्रतीक कहा जाता हैं। अंग्रेजी का सिंबोल (Symbol) शब्द का विकास ग्रीक क्रिया पद से हुआ हैं। इसका मूल अर्थ दो वस्तुओं को जोडना वा तुलना करना हैं। प्रतीक के द्वारा व्यक्त अर्थ और अन्य अर्थ के बीच सादृश्य की धारणा अन्तर्निहित होती हैं। प्रतीक का स्थूल रूप से विभाजन किया जाए तो पारम्परित प्रतीक और वैयक्तिक प्रतीक दो प्रकारके होते हैं। गौण रूप में प्रतीकों को कवि दाँते की डिभाइन कमेडी ग्रन्थ के आधार में अभिधात्मक, रूपकात्मक, आलंकारिक और सादृश्यगत चार स्तर में विभाजन किया गया हैं। पल इल्म मोरे ने भी तात्पर्यात्मक, रूपकात्मक, स्मारक और धार्मिक प्रतीक के आधार में प्रतीकों का चार स्तर ही स्वीकारा हैं। साहित्यिक लेख वा कृति में प्रयोग किए गए प्रतीकात्मक शब्दों को अध्ययन करने वाली वाद को प्रतीकवाद कहा जाता हैं। प्रतीक के सहयोग से व्यक्त कराया गया वा प्रतीक की माध्यम से व्यक्त होने वाली वस्तु, विषय, भाव आदिका अध्ययन प्रतीकात्मक अध्ययन कहा जाता हैं। प्रतीक के आधार में भारतीय साहित्यको देखा जाए तो इसका प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा हैं। वैदिक काल से ही प्रतीकात्मक प्रयोग पाया जाता हैं। काव्यों में बिम्ब और प्रतीक परस्पर सम्बद्ध रहते हैं। महाकवि कालिदास के चाहे काव्य हो या नाटक अभिव्यञ्जना कि दृष्टि से ससक्त, काव्यसौंदर्य एवं आनन्दानुभूति सम्पन्न, अभिव्यजनामूलक एवं आलंकारिक हैं। कालिदास की मेघदूतम् में बिम्बों की योजना अलौकिक चमत्कार सम्पन्न हैं अतः यहाँ प्रतीकों का भी चमतकार देखा जाता हैं। इसी को आधार मानते हुए कालिदास की मेघदूतम् काव्य के प्रतिनिधि श्लोकों का इस लेख में प्रतीकात्मक अध्ययन किया जाएगा।

कूट शब्द: प्रतीक, प्रतीकवाद, प्रतीकात्मक, पारम्परित, वैयक्तिक, अभिधात्मक, तात्पर्यात्मक, रूपक, आलंरिक, स्मारक आदि।

प्रस्तावना

प्रतीक शब्द की अमग्रेजी रूपान्तर (Symbol) हैं। किसी वस्तु की संकेत वा चिह्न विशेष को प्रती कहा जाता हैं। इस तरह से देखा जायए तो वस्तु को प्रतिनिधित्व कर्ने वाली सजीव वा निर्जीव वस्तुको प्रतीक कहा जाता हैं। प्रति उपसर्ग पूर्वक कन् धातु में दीर्घ कर देने से प्रतीक शब्द वनता हैं। वामन शिवराम आप्टे की संस्कृत हिन्दी कोश में इसका शाब्दिक अर्थ मुडा हुवा, विपर्यस्त, उलटा, विरुद्ध, प्रतिकूल, विपरीत के

साथ-साथ प्रतिमा, मुँह, चेहरा, किसी वस्तु का अग्रभाग, किसी श्लोक वा वाक्य का अग्र भाग दिया हैं। [1] शिवराम आप्टे ने यहाँ केवल प्रतीक शब्द का शाब्दिक अर्थ दिया है। यहाँ प्रतीक शब्द का विश्लेषण एवं विवेचन नही कीया हैं। राजपाल संक्षिप्त हिन्दी शब्दकोश में किसी तरफ बढाया हुआ, विपरीत रूप में लिया हुआ, प्रतिकूल, विरुद्ध, विलोम, प्रतिलोम, अंग, अवयव, भाग, अंश, आकृति, रूप आदि के साथ ऐसा वाक्य अक्षर आदि जो पूर्णता के द्योतक हों, सामने का हिस्सा, सामना प्रतीकवाद, वह अभिव्यंजनात्मक प्रणाली जिसके अनुसार प्रतीकों के आधार पर भावों एवं विषयों आदि का ज्ञान कराया जा सके। [2] बाहरी के संक्षिप्त हिन्दी शब्दकोश आकार की दृष्टिसे छोटा हैं। शब्द के अर्थ एवं शब्द के विवेचनात्मक अध्ययन, विश्लेषण के आधार पर देखा जाए तो इसका महत्व अधिक दिखा जाता हैं। यहाँ महत्वपूर्ण शब्दों की निवर्चन सहित इन की अर्थों एवं सैद्धान्तिक अर्थों भी विश्लेषण पाया जाता हैं। याहाँ बाहरी नें प्रतीक शब्द के शाब्दिक अर्थ प्रदान करने के साथ-साथ विवेचन एवं सैधान्तिक अर्थ भी प्रस्तुक किया हैं। प्रतीक के सिद्धानत के रूप में और साहित्यीक तत्व के रूप में भी अर्थ स्पष्ट किया हैं। नेपाली बृहत् शब्दकोश में अधिक पारिभाषिक रूप में प्रतीक शब्दका अर्थ प्रस्तुत किया हैं। यहाँ समान गुण के आधार में किसी दृश्य वा अदृश्य अन्य किसी वस्तु की कल्पना से प्रतिबिंब के रूप में प्रस्तुत वस्तु वा चिह्न को प्रतीक कहा जाता हैं। अन्य किसी वस्तु की भावनात्मक और प्रतिनिधित्व करने के लिए व्यवहारिक रूप में स्वीकारा हुवा वस्तु वा चिह्न को प्रतीक कहा जाता हैं। किसी एक मन्त्र, श्लोक, वाक्य आदि के पूरा अर्थ बोध कराने के लिए लिया हुवा पद एवं अक्षर को प्रतीक कहा जाता हैं। प्रतीकों के प्रयोग में जोड देने वाली और किसी अन्य वस्तु, भाव, विषय आदि का प्रस्तुतीकरण अपारम्पारिक प्रतीकों की माध्यम से प्रयास किया जाने वाला साहित्यिक वा चित्रकला संबन्धित अभिव्यंजना को प्रतीक कहा जाता हैं। [3] यहाँ देखा जाए तो प्रतीक शब्द के अर्थ अर्थ को प्रतिनिधित्व करने वाली साहित्यिक वाक्य में प्रयाग किया गया शब्द को प्रतीक माना हैं। अतः एव साहित्य निर्माण के संरचक घटक, अवयव वा तत्व के रूप मैं प्रतीक को स्वीकारा जाता हैं। बृहत् शब्दकोश में इस तरह सें प्रतीक शब्द की अर्थ प्रदान करने से साहित्य तत्व के रूप में प्रतीक शब्द को न्याय मिलता हैं। अंग्रेजी का सिंबोल (Symbol) शब्द का विकास ग्रीक क्रिया पद से हुआ हैं। इसका मूल अर्थ दो वस्तुओं को जोडना वा तुलना करना हैं। प्रतीक के द्वारा व्यक्त अर्थ और अन्य अर्थ के बीच सादृश्य की धारणा अन्तर्निहित होती हैं। साहित्यिक तत्व के रूप में प्रतीक का परिचय दिया जाए तो किसी विशिष्ट वस्तु या संकेत का प्रयोग अन्य वस्तु की अर्थ व्यक्त करने के लिए प्रयोग करना हैं। साहित्य में प्रतिपाद्य विषय का प्रत्यक्ष प्रतिपादन के विना अन्य विषय का उल्लेख करना प्रतीक का विधान करना कहलाता हैं। प्रतीक का स्थूल रूप से विभाजन किया जाए तो पारम्परित प्रतीक और वैयक्तिक प्रतीक दो प्रकारके होते हैं। पारम्परित प्रतीक साहित्य निर्माण परम्परा में पारम्परिक रूप से प्रचलित प्रतीक हैं और वैयक्तिक प्रतीक साहित्यकार स्वयं किसी विशेष वस्तुको प्रतीक के रूप में चयन करता हैं। गौण रूप में प्रतीकों को कवि दाँते की डिभाइन कमेडी ग्रन्थ के आधार में अभिधात्मक, रूपकात्मक, आलंकारिक और सादृश्यगत चार स्तर में विभाजन किया गया हैं। पल इल्म मोरे ने भी तात्पर्यात्मक, रूपकात्मक, स्मारक और धार्मिक प्रतीक के आधार में प्रतीकों का चार स्तर ही स्वीकारा हैं। [4] सामान्यतया अमूर्त, अदृश्य, अश्रव्य और अप्रस्तुत विषयों की प्रती होने के कार्य मूर्त, दृश्य, श्रव्य और प्रस्तुत विषयों से किया जाता हैं।

प्रतीकवादः- साहित्यिक लेख वा कृति में प्रयोग किए गए प्रतीकात्मक शब्दों को अध्ययन करने वाली वाद को प्रतीकवाद कहा जाता हैं। इस वाद को प्रतीकवाद की सिद्धान्त भी कहा जाता हैं। प्रतीकवाद पाश्चात्य काव्यशास्त्र का देन हैं। साहित्य अध्ययन एवं चिन्तन की क्षेत्र में प्रतीकवादी दृष्टि का प्रवर्तन एवं विकास सर्व प्रथम फ्रांस में हुआ था। पो, बाँदलेयर आदि के विचारात्मक निबंधों में प्रतीवादी चिन्तन की दृष्टिकोण मिलती हैं। सन् १८७०-८० के दशक में स्टीफेन मलार्मे ने साहित्य चिन्तन के क्षेत्र में गतिशील रूप दिया। इन के समर्थक बर्लेन, रिम्बो, कोर्वे आदि विद्वान थे। प्रतीक शब्द का विभिन्न शास्त्रों में विशिष्ट विभिन्न अर्थों के लिए प्रयोग किया जाता, मनोविज्ञान, गणित, तर्कशास्त्र, भाषाविज्ञान, धर्मशास्त्रों में विभिन्न अर्थों के लिए प्रतीक शब्द का प्रयोग किया गया हैं। साहित्यिक कृति एवं लेख की सौंदर्य चेतना के रूप में प्रतिकात्मक चिन्तन

की १९ वीं शताब्दी के आधुनिक फ्रांस और इंग्लैंड कवीयों एवं साहित्य चिन्तकों की देन माना जाता हैं।

प्रतीकवाद के समर्थकों को प्रतीकवादी कहा जाता हैं। वास्तव में प्रतीकों के प्रयोग में जोड देने वाले, प्रतीकवाद में विश्वस कर्ने वाले और प्रतीकवाद के अनुयायी प्रतीकवादी हैं। केवल इतना हि नही प्रतीकवाद के सम्बंन्घ में जिज्ञासा रखने वाले को भी प्रतीकवादी कहा जाता हैं।

प्रतीक के आधार में भारतीय साहित्यको देखा जाए तो इसका प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा हैं। वैदिक काल से हि प्रतीकात्मक प्रयोग पाया जाता हैं। वेद में प्रतीकों के सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। भारतीय काव्यशास्त्रों में अलंकार के सन्दर्भ में प्रतीक की स्वरूपों का विचार किया हैं। प्रतीकों की भावोद्बोधक शक्ति पर विचार लक्षणा और व्यंजना शब्दशक्तियों के सन्दर्भ में किया हैं। इसे हि बोध कराने के लिए पाश्चात्य विचारक प्रतीक का प्रमुख लक्षण मानते हैं। जिसको भारतीय विद्नों ने अन्योक्ति नाम का अलंकार माना हैं। सादृश्यमूला अलंकार के वर्ग में लिए गए रुपक, उपमा आदि अलंकारों से निर्मित बिम्बविधान कि आवृत्ति से उपमान मे हि उपमेय का अध्यवसान से बोध कराने की जो प्रताकात्मक शक्ति आती हैं उस का रुपकातिशयोक्ति अलंकार के विवेचन के क्रम मे किया हैं। [5] भारतीय काव्यशास्त्री प्रतीक की योजन, स्वरूप और महत्व को जानते थे। प्रतीक को भावानुभूति और व्यंजना का एक मात्र साधन नही मानते। भाषा की लक्षणा और व्यंजना शक्ति में साहित्यकार के भावों को जगाने, भावों को स्तर अनुरूप परत-दर-परत अभिव्यक्त करने की शक्ति निहित होती हैं। अतः उतना महत्व नही देते।

प्रतीकात्मक:- प्रतीक की माध्याम से व्यक्त होने वाली और प्रतीक की सहयोग से व्यक्त कराया गया वस्तु, विषय, भाव आदि को प्रतीकात्मक कहा जाता हैं। अतः प्रतीक की सहयोग से व्यक्त कराया गया वा प्रतीक की माध्यम से व्यक्त होने वाली वस्तु, विषय, भाव आदिका अध्ययन प्रतीकात्मक अध्ययन कहा जाता हैं। इस लेख में प्रतीकात्मक अध्ययन के आधार में कालिदास की मेघदूतम् काव्य का अध्ययन किया जायेगा।

मेघदूतम् में प्रतीक:- साहित्य में प्रतीक की योजना सौंदर्य एवं प्रभाव को वृद्धि करने के लिए प्रयोग किये जाने वाला शैलीगत तत्व हैं। साहित्य सौंदर्य आधान इसका प्रमुख उद्देश्य माना जाता हैं। प्रतीक सौंदर्य आदान के माध्यम साहित्य निर्माण के लिए शैलीगत सौंदर्य सम्पादन करता हैं। अतः एसे शैलीगत तत्व माना जाता हैं। जिस साहित्य वा काव्य में बिम्ब का योजना पाया जाता हैं वहाँ प्रतीक योजना भि पाया जाता हैं। काव्यों में बिम्ब और प्रतीक परस्पर सम्बद्ध रहते हैं। कालिदास की मेघदूतम् में बिम्बों की योजना अलौकिक चमत्कार सम्पन्न हैं अतः यहाँ प्रतीकों का भी चमतकार देखा जाता हैं। उदाहरणार्थ :-

कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः
शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु ।। [6] ।१।
(पू.मे)

भावार्थ:- अपने काम में प्रमाद के कारण प्रिया विरहको सहन करने के अक्षम, एक साल तक अनुभव किए जानेवाले अपने स्वामी के शापसे महत्वहीन होकर। किसी यक्ष ने जनकतनया की स्नान से जलवाले, घने नमेरुवृक्षों से युक्त रामगिरि आश्रम में निवास किया।

उक्त श्लोक कालिदास के मेघदूतम् काव्यका वस्तुनिष्ठात्मक मंगलाचरण के रूप में प्रस्तुत किया प्रथम श्लोक हैं। इस श्लोक को बाह्य रूप से देखा जाये तो यहाँ किसी प्रतीक का प्रयोग नही हैं पर आन्तरिक रूप से देखा जाए तो जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु इस उपवाक्य में कालिदास नें प्रतीक की योजना किया हैं। जनकतनया सीताजी को काव्यों में आदर्श नारी चरित्र की प्रतीक के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। समग्र पद का अर्थ देखा जाए तो जनकस्य तनया स्नानानि पुण्यानि उदकानि येषु ते पुण्योदकाः होता हैं। अतः पुण्योदका का अर्थ पुण्य प्राप्त किए हुए उदक एवं सम्पूर्ण पाप एवं श्राप को प्रक्षालन करने के लिए सक्षम उदक होता हैं। स्वच्छ जल को काव्यों में पवित्रता के प्रतीक के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। यहाँ इस पद को आलोचनात्मक दृष्टि से देखा जाए तो यक्ष का स्वामी इन्द्र का कोषाध्यक्ष कुवेर था। यक्ष अपनी प्रिया के अतिमोहित होकर प्रेमान्ध अतिकामुक होगया था। कुवेर ने उसको मर्यादा तोडने के कारण श्राप दिया था।

कामान्ध होकर अपने स्वामी के आज्ञा का उलंधन करना, मर्यादा को तेडना वो भी प्रात ब्रहम मुहूर्त देवोपसना की समय में, इस को आदर्श दृष्टि से देखा जाए तो पाप कृत्य हैं। इसिलिए कुवेर ने यक्ष को एक साल का राम गिरि के आश्रम में तप करके प्रिया के वियोगी बन्ने का श्राप दिया था। यक्ष द्वारा किये गए पाप प्रक्षालन के लिए उसी स्थान को निश्चय कर उसको आदेश मिला था। अतः यहाँ विश्लेषणात्मक दृष्टि से कहा जा सकता हैं याहाँ कालिदास ने यक्ष के माध्यम से लोक को कर्तव्यों के प्रति आदर्शता और निष्ठता का महत्व बोध कराने के लिए जनकतनया पद का प्रयोग किया हैं। भारतीय संस्कृति एवं धार्मिक विश्वस के आधार में पवित्र स्थल की जल में स्नान करने से पापों का प्रक्षालन होती हैं। अतः यहाँ पाप नष्ट करने की साधन के प्रतीक रूप में पुण्योदक पद का प्रयोग किया हैं। काव्य निर्माण परम्परा में ये दोनों प्रतीक प्राचीन काल से प्रचलित हैं। अतः यहाँ कालिदास पारम्परिक प्रतीक का य़ोजन किया हैं। प्रतीक को गैण दृष्टि से दखा जाए तो धार्मिक प्रतीक का प्रयोग हैं।

कालिदास का सम्पूर्ण मेघदूतम् काव्यको शाब्दिक अध्ययन किया जाए तो प्रतीकों का भण्डार कहा जा सकता हैं। इस लेख में विहंगम दृष्टि के आधार में हि अध्ययन किया जाता हैं। प्रतीक योजन की सुन्दर रूप निम्न श्लोक में प्राप्त होता हैं :-

तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधानहेतो-
रन्तर्बाष्पश्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघालोके भवति सुखिनोऽ प ्यन्यथावृत्ति चेतः
कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे।। [7] ।३। (पू.मे)

भावार्थ :- आँसू रोककर यक्ष ने उत्कण्ठा त्पन्न करने वाली मेघ के सामने कष्टसे रहकर बहुत समय तक चिन्ता किया। मेधका दर्शन होने से सुखी होनेवाले की चित्त विकृत हो जाता है तो कण्ठ में आलिङ्गन करना चाहानेवाली दूर रहने पर फिर क्या कहना हैं?

उक्त श्लोक में कलिदास ने राजराजः, मेघ और अन्यवृत्ति चेतः तीन पद प्रतीक के रूप में योजन किये हैं। यहाँ पर राजराजः पद का एक अर्थ मे देखा जाए तो समग्र यक्ष के राजा यक्षराज का स्वामी कुवेर को सम्बोधन करने के लिए किया हैं। दुसरी ओर से देखे तो धन की मालिक कुवेर हैं कोष राजा के अधिन होता हैं इसिलिए सम्पूर्ण राजा के राजा कुवेर के हि सम्बोधन के लिए राजराजः प्रतीक का कालिदास ने यहाँ किया हैं। इसितरह मेघ पद का प्रतीकात्मक योजन काव्यों में वर्षा कालके लिए, वियोग काल की बोधन के लिए और कहिँ-कहिँ कारुणिक प्रसङ्ग एवं करुणोद्बोधन के लिए भी किया जाता हैं। इस प्रसङ्ग में एक प्रकार से किसानों को फसल लगाने के समय की बोध कराने के लिए योजन किया हैं तो दुसरी प्रकार से वियोग सन्तप्त यक्ष का प्रिया को संदेश भेजने के लिए मैत्री भाव सम्पन्न दूत के रूप में एवं अधिक वियोग उत्पन्न के कारण के रूप में योजन किया हैं। अन्यथावृत्ति चेतः प्रतीक का योजन कृषि पक्ष में फसलों को उगने एवं फलने के आशा से प्रफुल्लित भाव के कारण उच्छलने वाले आँसू के रूप में किया हैं। वियोगी यक्ष पक्ष में वियोग के कारूणिक भाव के कारण निकलने वाले आँसू के रूप मे योजन किया हैं। इस प्रसङ्ग मे कालिदास ने पारम्परिक एवं वैयक्तिक दोनौं प्रतीकौं का योजन किया हैं। यहाँ योजन किया गया राजराजः एवं मेघ दोनों प्रतीक पारम्परिक हैं। क्यूंकि ये प्रतीक प्रचीन काल से काव्य निर्माण परम्परा मे प्रचलित हैं। अन्यथावृत्ति चेतः वैयक्तिक प्रतीक का योजन किया हैं। वैयक्तिक प्रतीक को नवनिर्मित प्रतीक भी कहा जाता हैं। अतः इस प्रकार के प्रतीक काव्य सौंदर्य सम्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करते हुए भि कवि परम्परा में प्रसिद्ध नही होता। लेकिन उत्तरवर्ती कवियों द्वारा निरन्तर काव्यों मे प्रयोग करने के कारण भविष्य में पारम्परिक प्रतीक का रूप ले सकता हैं। यहाँ कालिदास नें वाक्यार्थ के प्रतिनिधित्व काराने के लिए कल्पना प्रसूत अन्यथावृत्ति चेतः अपारम्परित प्रतीक का योजन किया हैं। गौण प्रतीक के रूप मे राजराजः और मेघः अभिधात्मक प्रतीक हैं तो अन्यथावृत्ति चेतः तात्पर्यात्मक प्रतीक हैं।

और भी :-

सन्तप्तानां त्मसि शरणं तत्पयोद! प्रियायाः
सन्देशं मे हर धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य।
गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां
बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या।। [8] ।७।
(पू.मे)

उक्त श्लोक में कालिदास ने घनपतिः, अलका और स्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या प्रतीकात्मक पदों का योजन किया हैं। धनपतिः पदका सामासिक विश्लेषण षष्टि तत्पुरुष समास में धनस्य पतिः धनपतिः किया जाता हैं। पद प्राप्त इसका अर्थ धनके पति वा धनके मालिक होता हैं। भारतीय संस्कृतिक एवं धार्मिक परम्परा में धनके रक्षक वा मालिक कुवेर को माना जाता हैं। यहाँ कालिदास ने कुवेर के लिए धनपतिः प्रतीकात्मक पद का योजन किया हैं। प्रतीक के रूप में अलका पद का योजन भारतीय काव्यों में अत्यनत प्रसिद्ध हैं। स्वर्ग के समान सुन्दर शहर के लिए इस प्रतीकात्मक पद का योजन किया जाता हैं। इसका शाब्दिक अर्थ भूषित किया हुवा होता हैं। यहाँ पर कालिदास ने उत्तर दिशा के अधिपति कुवेर के शहर के लिए अलका प्रतीकात्मक पद का योजन किया हैं। भारतीय काव्य निर्माण परम्परा में चन्द्र किरण को शितल एवं प्रकाश के प्रतीक के रूप में योजन किया जाता हैं। कालिदास ने उक्त श्लोक में स्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या प्रतीकात्मक उपवाक्यका योजन धनिकों का वासस्थान वा भवन सें भरा हुआ शहर को बोध कराने के लिए किया हैं। स्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या उपवाक्य का शाब्दिक अर्थ भगवान शिवजी के शिर मे स्थित चन्द्र किरण समान प्रकासितर भवन होता हैं। देखा जाए तो जहाँ धनकि सम्पन्नता होता हैं वहा सम्पूण सुविधा रहता हैं। सुविधा युक्त शहर प्रकासित स्भावतःप्रकाशित होता हैं। यहाँ पर जिस शहर धनके अधिपति कुवेर का वासस्थान हैं वो शहर तो निश्चय दिया और प्रकाश जैसे हि दिप्य दिपकभाव समबन्ध से सम्बन्धित होकर धनसम्पन्न होता। धनिकों की वासस्थानको अमरकोष के आधार पर हर्म्य कहा जाता हैं। कालिदास नें उक्त प्रसङ्ग मे शान्त, सुविधासम्पन्न एवं नाना प्रकार की वत्तीयों एवं चन्द्र प्रकाश से प्रकाशित शहरको बोध कराने के लिए स्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या उपवाक्य का प्रयोग किया हैं। इसका आशयार्थ हे मेध तुम वहाँ पहुँचते-पहुँचते रात हो जाएगा तो भि ना-ना प्रकार के प्रकाश एवं चन्द्र किरण से प्रकाशित उद्यान लता से भरे हुए उच्चे-उच्चे मंजिलों वाले शहरको तुहमे पहेचानने मे कोही कठिनाई नही होगी होता हैं। यहाँ पे आए हुए सभी प्रतीक पारम्परिक प्रतीक हैं। गौण प्रतीक के आधार में धनपतिः और अलका अभिधात्मक प्रतीक हैं तो स्थितहरशिरश्चन्द्रिकाधौतहर्म्या उपवाक्य स्मारक प्रतीक हैं।

उक्त उदाहरण सभी पूर्व मेघ से लिया हैं। उत्तर मेघ कालिदास की हि रचना हैं या नही ये विवाद से अभि तक मुक्त नही हैं। यह इस लेख की विवेचना का विषय नही हैं। प्रतीक योजना के आधार मे देखा जाए तो पूर्व मेघ की तरह उत्तर मेघ भी प्रतीकात्मकता की सम्पन्नता से युक्त हैं। उदाहरणार्थ :-

यत्र स्त्रीणां प्रियतमभुजालिङ्गनोच्छ्वासितीना
मङ्गग्लानि सुरतजनितां तन्तुजालावलम्बा।
त्वत्संरोधापगमविशदैश्चन्द्रपादैर्निशीथे
व्यालुम्पन्ति स्फुटजललवस्यन्दिनश्चन्द्रकान्ताः।। [9] ।७।
(उ.मे.)

भावार्थ :- मेघ! अलका में आधीरात तुम्हारि रुकावट न रहने से निर्मल चन्द्रमा की किरणों से व्यक्त्त जलविंदुओं को टपकाने वाली चाँदनी के नीचे सूत्र समूह से गुम्फित चन्द्रकान्त मणियाँ प्रियतमों की बाहुओं के आलिङ्गन से शिथिल हो जानेवाली स्त्रियों की रतिक्रिडा से उत्पन्न शरीर के खेदको हटाती हैं।

उक्त श्लोक में कालिदास ने तन्तुजालः, चन्द्रपादैः और चन्द्रकान्त प्रतीकात्मक पदों का योजन किया हैं। भातीय काव्य मे योजन किया जानेवाल तन्तुजाल प्रतीकात्मक पद पारम्परित प्रतीक के वर्ग में आता हैं। तन्तुजाल पद का शाब्दिक अर्थ तन्तु से बुना हुवा जाल होता है। नाना अर्थ के पतिनिधित्व के लिए तन्तुजाल प्रतीकात्मक पद का प्रयोग किया जाता हैं। उक्त प्रसङ्ग में कालिदास नें बादलों के विच से प्रवेश करने वाली चन्द्रमा के किरण के दृश्यचित्र व्यक्त करने के लिए तन्तुजाल प्रतीकात्मक पदका प्रयोग किया हैं। यहाँ कालिदास ने जल से भरे छित्रदापूर्ण मेघ का दृश्य स्वरूपका चित्रात्मक रूप प्रस्तुत किया हैं। इसी तरह चन्द्रपादै प्रतीकात्मक पद का शाब्दिक अर्थ चन्द्रमा के पाद समूह होता हैं। बाह्य दृष्टि से देखा जाए तो चन्द्र तो एक है लेकिन चन्द्रमा के सहस्र पाद का प्रतीकात्मक अर्थों के लिए काव्यों मे उल्लेख होता हैं। अतः चन्द्रमा को सहस्र रस्मी भी कहा जाता हैं। इस प्रसङ्ग मे चाँदनी रात रूप प्रतीकात्मक अर्थ के लिए चन्द्रपादैः पद का योजन किया है।

चनद्रकान्त मणीका नाम हैं। इसका स्वरूप शीतल एवं स्वप्रकासि होता हैं। प्रतीकात्मकता के रूप में इसका योजन हार रूप अर्थ एवं शरीरको शीतलता प्रदान करने की कारक तत्व के रूप मे प्रयोग किया जाता हैं। उक्त प्रसङ्ग मे रतिक्रिडा से सन्तुष्टता प्राप्त किए हुए सुन्दकीयों के सौंदर्य, सन्तुष्ट एवं धैर्य स्वरूप को व्यक्त करने के लिए किया गया हैं। उक्त श्लोक मे योजन किया गया तीनों प्रतीकात्मक पद परम्परिक प्रतिक के वर्ग मे आते हैं। गौण प्रतीक के आधार मे कहा जाए तो आलङ्कारिक प्रतीकके वर्ग मे आते हैं।

और भी :-

वापी चास्मिन्मरकतशिलाबद्धसोपानमार्गा
हैमैश्छन्ना विकचकमलैः स्निग्धवैदूर्यनालैः।
यस्यैस्तोये कृतवसतयो मानसं सन्निकृष्टं
नाध्यास्यन्ति व्यपगतशुचस्त्वामपि प्रेक्ष्य हंसाः।। [10]
।१३। (उ.मे.)

भावार्थ :- मेरे भवन में पन्नाओं से सीढीयों का मार्ग बना हुआ हैं। वैदूर्यमणि के नाल से विकसित सुवर्ण कमलों से व्याप्त बावली भी हैं। जिस के जल में निवास करने वाले हंस तुम्हें देऱकर भी दुःख नही मानते हुए निकटस्थित मानससरोवर को याद नही करते।

उक्त श्लोक में मरकतशिला, वैदुर्यनालैः, हैमैः, हंसा एवं मानसम् प्रतीकात्मक पदों का योजन किया हैं। मरकत एक मणी की प्रजाति हैं स्निग्धता, साफ एवं स्वच्छता का प्रतीकात्मक अर्थ बोध कराने के लिए भारतीय काव्यें मे इस पद का योजन किया जाता हैं। इस प्रसङ्ग में साफ, स्निग्ध, सौन्दर्य, सुविधा सम्पन्न यक्ष के निवासस्थान को बोध कराने के लिए मरकतशिला प्रतीकात्मक पद का योजन किया हैं। इसी तरह विदुर भी एक प्रकार की मणि हैं। इस का भी भारतीय काव्यों मे प्राचीन काल से प्रतीकात्मक योजना पाया जाता हैं। यहाँ पर चिकना हरा नाल रूप प्रतीकात्मक अर्थ प्रदान कर्ने के लिए विदुर मणि रूप प्रतीकात्मक पद का योजन किया हैं। हेम वा स्वर्ण प्रतीकात्मक पद का भी भारतीय काव्यशास्त्र मे प्राचीन काल से होता आरहा हैं। यहाँ यक्ष के भवन का कलात्मक निर्माण बोध करना ने के लिए स्वर्ण कृत्रिम कमल बोधक हैमैः वशेषण प्रतीकात्म पद विकचकमलैः वा विकसित कमल विशेष्य रूप अर्थ के लिए योजन किया गया है। हंस पद का शान्ति को बोध कराने के लिए प्रतीकात्मक योजन किया जा रहा हैं। इस प्रसङ्ग मे यक्ष मेघ को शान्त एवं धैर्य धारण के लिए सन्देश भेजने जा रहा हैं। अतः यहाँ हंस का प्रतीकात्मक योजन अत्यन्त उपयुक्त होता हैं। मान सरोवरका का भी प्रतीकात्मक योजन भारतीय काव्यों में प्राचीन काल से होता रहा हैं। विशेष रूपसे काव्यों में प्राकृतिक सौंदर्य को प्रस्तुत करने के लिए मानसरोवर का प्रतीकात्मक योजन किया जाता हैं। इस प्रसङ्ग में यक्ष का भवन प्राकृतिक सौंदर्य से भि आधिक सुन्दर हैं। इस अर्थ को बोध कराने के लिए मानसम् प्रतीकात्मक पद का योजन किया गया हैं। वास्तव में इस श्लोक को आलोचनात्म दृष्टि से देखा जाए तो यहाँ कुवेर का भृत्य यक्षों का राजा यक्षराज का भवन कुशल कारिगार से बना हैं। इस की सौंदर्य प्रकृतिक सौंदर्य से अधिक सौंदर्य एवं सुविधा सम्पन्न हैं। प्राकृतिक सौंदर्य का आनन्द लेने के लिए सदन से बाहार जाने कि जरुरत ही नही होती। ऐसी सम्पन्नता से भरी भवन में मेयी प्रिया पति विरह से व्याकूल होकर अकेली रहती हैं। अतः तुम्हें किसी तरह से भि जाके सन्देश देना होगा इस अर्थ को व्यक्त करने के लिए उक्त प्रतीकातमक पदों का योजन किया हैं। इस श्लोक मे योजन किए गए सभी प्रतीकात्मक पद पारम्परिक प्रतीक हैं। गौण प्रतिक के आधार मे देखा जाए तो मरकतशिला रूपकात्मक प्रतीक हैं। वैदुर्यनालैः, मानसम् और हैमैः आलङ्कारिक प्रतीक हैं। हंसा प्रतीकात्मक पद का तात्पर्यमूलक अर्थ व्यक्त करने के लिए योजन किया गया है अतः ये तात्पर्यमूलक प्रतीक हैं।

निष्कर्ष :- भारतीय काव्यों एवं साहित्यों मे प्रतीकों के प्रती दृष्टिकोण वैदिक काल से ही पाया जाता हैं। आदि कवि वाल्मिकी ने भी रामायण मे प्रतीकों की सुन्दर योजन किया हैं। भारतीय काव्य निर्माण परम्परा में प्रतीक ने काव्य निर्माण की प्रमुख तत्व के रूप में मान्यता नही पाया हैं। अलङ्कार और लक्षणा व्यञ्जना शक्ति निरुपण के प्रसङ्गों मे सामान्य चर्चा पाया जाता हैं। काव्य एवं साहित्य को सौंदर्ययुक्त ललित कला का मान्य दिया जाए तो प्रतीक भी काव्य वा साहित्य सौंदर्य सम्पादन की भाषा-शैलीगत एक प्रमुख तत्व तत्व हैं। काव्यार्थ की अभिव्यञ्जना में इसका प्रमुख भूमिका रहती हैं। जिस काव्यों में लक्ष्य, व्यांग्य एवं आलङ्कारिक शब्दार्थ का योजन किया जाता हैं। वो

काव्य अधिक बिम्बात्मक एवं प्रतीकात्मक होता हैं। महाकवि कालिदास के चाहे काव्य हो या नाटक अभिव्यञ्जना कि दृष्टि से ससक्त, काव्यसौंदर्य एवं आनन्दानुभूति सम्पन्न, अभिव्यजनामूलक एवं आलंकारिक हैं। अतः उनके सभी कृतियों में प्रतीकों का सुन्दर योजना पाया जाता हैं। इस लेख ने केवल कालिदास के मेघदूतम् खण्डकाव्य का प्रतिनिधि दो-चार श्लोकों का अध्ययन किया हैं। इस के आधार मे कहा जा सकता है कि कालिदास ने उक्त काव्य में स्थूल प्रतीकों में पारम्परिक एवं वैयक्तिक दोनों प्रतीकों का योजन किया हैं। इसी तरह गौण प्रतीकों मे भी सभी प्रकार के प्रतीकों का योजन पाया जाता हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

1. आप्टे, शिवराम, सन्. २००२, संस्कृत-हिन्दी शब्दकोश, जयपुर: रचना प्रकाशन
2. कालिदासः, सन्. २०१०, शेषराजशर्मा रेग्मी (सम्पा.) वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
3. चौधरी, सत्यदेव एवं शान्तिस्वरूप गुप्त, सन्. २०१३, भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र, दिल्ली: अशोक प्रकाशन
4. जोशी, कुमार बहादुर, सन्. २००७, पाश्चात्य साहित्यका प्रमुख वाद, ललितपुर: साझा प्रकाशन
5. पराजुली, कृष्णप्रसाद (सम्पा.) सन् २००७, नेपाली बृहत् शब्दकोश, काठमाडौं: साझा प्रकाशन
6. बाहरी, हरदेव, सन्. २००६, संक्षिप्त हिन्दी शब्दकोश, दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्ज
7. भण्डारी, पारसमणि, सन्. २००७, नेपाली कविता काव्य, काठमाडौं : सांग्रिला प्रिन्टिङ्ग
8. भण्डारी, राजेन्द्र, पारसमणि सम, सन्. २००८, भाषा-साहित्य, गान्तोक: साहित्य सिर्जना सहकारी समिति
9. मिश्र, शोभाकान्त, सन् २०१२, पाश्चात्य काव्य-चिन्तन, पटना : अनुपम प्रकाशन
10. श्रीवास्तव, अर्चना, सन्. २००३, भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन